

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 5 अध्याय 18: वर्षों में स्तुतियाँ

22 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



पावन पृथ्वी के एक-एक वर्ष में, उन प्रदेशों के शासक-भक्त अपने लोगों को साथ लेकर भगवान् की ओर हाथ जोड़ते हैं, जो उनके बीच एक प्रिय दिव्य रूप में निवास करते हैं — हयग्रीव, नृसिंह, प्रद्युम्न, मत्स्य, कूर्म और वराह — और प्रत्येक प्रदेश का हृदय अपनी स्तुति उड़ेल देता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

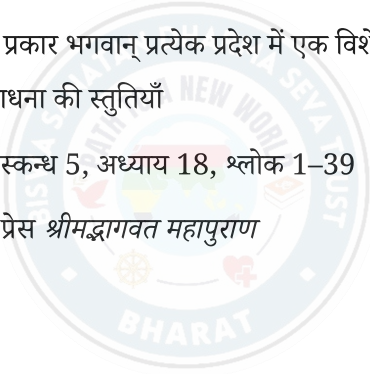
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्जम में पुनः आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। अब श्रीशुक हमारी दृष्टि को पृथ्वी की नदियों और पर्वतों से उठाकर उससे उठती हुई आराधना की ओर ले चलते हैं। इस विशाल भू-मण्डल के एक-एक प्रदेश में, भागवत हमें बताता है, स्वयं भगवान् एक विशेष, प्रिय रूप में निवास करते हैं, और उस भूमि का शासक, अपने समस्त लोगों को

एकत्र कर, उस रूप की अखण्ड प्रेम से आराधना करता है। पंचम स्कन्ध का यह अठारहवाँ अध्याय छह देदीप्यमान स्तुतियों की एक माला है — हयग्रीव और नृसिंह को, प्रद्युम्न और मत्स्य को, कूर्म और वराह को — जिन्हें वे महान् भक्त गाते हैं जिनके नाम हमें प्रिय हैं: भद्रश्रवा और प्रह्लाद, देवी लक्ष्मी और पावन मनु, अर्यमा और स्वयं धरती माता। इन्हें पढ़ना समूची पृथ्वी में विचरण करना और उसे गाते हुए पाना है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 5 (पंचम स्कन्ध)
- अध्याय: 18 (अष्टादश अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: वर्षों में भगवान् के दिव्य रूपों की स्तुतियाँ
- प्रमुख वक्ता: श्रीशुकदेव गोस्वामी (श्रीशुक), राजा परीक्षित को कथा सुनाते हुए; कथा के भीतर, छह वर्षों के शासक-भक्त एक-एक स्तुति अर्पित करते हैं
- प्रमुख श्रोता: राजा परीक्षित — और यह संवाद सूत गोस्वामी द्वारा नैमिषारण्य में एकत्रित ऋषियों को पुनः सुनाया जाता है
- मुख्य स्थल: भूमण्डल के वर्ष (प्रदेश) — भद्राश्व, हरिवर्ष, केतुमाल, रम्यक, हिरण्मय और उत्तर कुरुओं की भूमि
- केन्द्रीय विषय: किस प्रकार भगवान् प्रत्येक प्रदेश में एक विशेष दिव्य रूप में निवास करते हैं, और वहाँ उस प्रदेश के प्रमुख भक्त और लोगों द्वारा उन्हें अर्पित आराधना की स्तुतियाँ
- प्रमुख श्लोक-सीमा: स्कन्ध 5, अध्याय 18, श्लोक 1-39
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



पिछले अध्याय से

सत्रहवें अध्याय में, श्रीशुक ने बताया कि किस प्रकार पावन गंगा भगवान् के चरणकमलों से उतरी, चिरकाल तक भगवान् शिव के मस्तक पर धारण की गई, और फिर मेरु पर्वत के शिखर पर गिरकर चार पावन धाराओं में विभक्त हुई जो पृथ्वी के वर्षों में बहती हैं। उन्होंने वह श्रद्धामय स्तुति भी सुनाई जो भगवान् शिव इलावृत-वर्ष में भगवान् संकर्षण को अर्पित करते हैं। पावन जलों और स्तुति के समूचे संसार में बहने की उस दृष्टि से, अब कथा उन अनेक रूपों की ओर मुड़ती है जिनमें भगवान् प्रदेश-दर-प्रदेश पूजे जाते हैं।

भद्राश्व-वर्ष और भगवान् हयग्रीव की स्तुति

भद्राश्व की भूमि में, श्रीशुक बताते हैं, उसके शासक भद्रश्रवा — धर्म के, अर्थात् धर्म के अधिष्ठाता देव के पुत्र — अपने लोगों के प्रमुख पुरुषों सहित, भगवान् वासुदेव के एक अत्यन्त प्रिय रूप की आराधना करते हैं: हयग्रीव, अश्व-मुख वाले भगवान्, जो साक्षात् धर्म हैं। गहन समाधि में अपने मन को स्थिर कर और अपने बीच उनकी जीवन्त उपस्थिति का अनुभव कर, वे अपने स्वर स्तुति में उठाते हैं। वे भगवान् को धर्म कहकर वन्दन करते हैं, जो पवित्र ॐ अक्षर से सूचित हैं और जो अपनी शरण में आने वाले सबका हृदय पवित्र करते हैं। वे उनकी अद्भुत माया पर

विस्मित होते हैं, जिसके कारण देहधारी जीव, अपने ही बड़ों और बच्चों का दाह-संस्कार करके भी, समीप खड़ी मृत्यु को नहीं देख पाता, और क्षणभंगुर सुख भोगने के लिए नए-नए कर्मों की योजना बनाता है। बुद्धिमान् जानते हैं, वे गाते हैं, कि यह जगत् नश्वर है; फिर भी लोग उनकी माया से मोहित हैं — और उस अजन्मा भगवान् को, जिनकी लीलाएँ इतनी अद्भुत हैं, वे बारम्बार प्रणाम करते हैं।

फिर उनकी स्तुति उस महान् कर्म को स्मरण करते हुए अपने शिखर पर पहुँचती है, जिससे हयग्रीव ने समस्त लोकों को कृतार्थ किया।

वेदान् युगान्ते तमसा तिरस्कृतान्
रसातलाद्यो नृतुरङ्गविग्रहः ।
प्रत्याददे वै कवयेऽभियाचते
तस्मै नमस्तेऽवितथेहिताय इति ॥ ६ ॥

*vedān yugānte tamasā tiraskṛtān rasātalād yo nṛ-turaṅga-vigrahaḥ pratyādade vai kavaye
'bhiyācate tasmai namas te 'vitathehitāya iti*

अर्थ: यह आप ही थे, जिन्होंने नर-अश्व के रूप में प्रकट होकर, युग के अन्त में उन वेदों को — जिन्हें अन्धकार हर ले गया था — रसातल की गहराइयों से वापस लाकर, प्रार्थना करते हुए आदि द्रष्टा ब्रह्मा को लौटा दिया। आपको प्रणाम, जिनका प्रत्येक संकल्प अचूक रूप से पूर्ण होता है। (स्कन्ध 5, अध्याय 18, श्लोक 6)



भद्राश्व-वर्ष में, भद्राश्रवा और उनके लोगों के प्रमुख पुरुष भगवान् हयग्रीव की आराधना करते हैं, अश्व-मुख वाले उस रूप की जिसने हरे गए वेदों को पुनः प्राप्त कर ब्रह्मा को लौटाया (श्लोक 1-6)।

हारेवर्ष और भगवान् नृसिंह को प्रह्लाद को स्तुति

हरिवर्ष में भगवान् नरहरि, नर-सिंह के रूप में निवास करते हैं — वही रूप जिसे उन्होंने अपने प्रिय बालक के लिए धारण किया। वहाँ महान् भक्त प्रह्लाद, जिनके निष्कलंक शील और आचरण ने दैत्यों के वंश को भी पवित्र कर दिया, इस प्रिय रूप की अखण्ड और अनन्य भक्ति से आराधना करते हैं, और उस प्रदेश के समस्त लोगों सहित अपना हृदय उँडेल देते हैं।

ॐ नमो भगवते नरसिंहाय नमस्तेजस्तेजसे आविराविर्भव वज्रनख वज्रदंष्ट्र कर्माशयान् रन्धय रन्धय तमो ग्रस ग्रस ॐ स्वाहा ।
अभयमभयमात्मनि भूयिष्ठा ॐ क्षौम् ॥ ८ ॥

om namo bhagavate narasimhāya namas tejas-tejase āvir-āvirbhava vajra-nakha vajra-daṁṣṭra karmāśayān randhaya randhaya tamo grasa grasa om svāhā; abhayam abhayam ātmani bhūyiṣṭhā om kṣraum.

अर्थ: ॐ, भगवान् नरसिंह को प्रणाम; समस्त ज्योतियों की ज्योति को प्रणाम। हे वज्र के समान नख और दाढ़ों वाले भगवन्, पूर्णतया प्रकट हों; हमारी अन्तर्निहित वासनाओं के बीजों को भस्म करें, भस्म करें; अज्ञान के अन्धकार को ग्रस लें, ग्रस लें। हम आपकी आराधना अर्पित करते हैं — हमारे हृदय में प्रकट हों और हमें पूर्णतया निर्भय बनाएँ। ॐ क्षौम्। (स्कन्ध 5, अध्याय 18, श्लोक 8)

प्रह्लाद का प्रेम अपने ही हृदय में नहीं रुकता, अपितु प्रत्येक जीव को अपना देने के लिए बाहर पहुँचता है। उनकी स्तुति अपने ही संकट से समूची सृष्टि तक फैल जाती है:

स्वस्त्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदतां
ध्यायन्तु भूतानि शिवं मिथो धिया ।
मनश्च भद्रं भजतादधोक्षजे
आवेश्यतां नो मतिरप्यहैतुकी ॥ ९ ॥

svasty astu viśvasya khalaḥ prasīdatāṁ dhyāyantu bhūtāni śivaṁ mitho dhiyā manaś ca bhadraṁ bhajatād adhokṣaje āveśyatāṁ no matir apy ahaitukī

अर्थ: समूचे विश्व का कल्याण हो, और दुष्ट भी शान्ति पाएँ; समस्त प्राणी परस्पर एक-दूसरे के हित का चिन्तन करें, और प्रत्येक मन, बिना किसी स्वार्थ के, भगवान् में जाकर स्थिर हो जाए। (स्कन्ध 5, अध्याय 18, श्लोक 9)

यदि हृदय में कोई आसक्ति हो ही, तो वह भगवान् के प्रेमी भक्तों के लिए हो, और कभी घर, स्त्री, सन्तान, धन या स्वजनों के लिए नहीं — क्योंकि सन्तुष्ट और आत्म-संयमी जीव शीघ्र ही कल्याण पाता है, जबकि इन्द्रिय-सुखों का प्रेमी नहीं। जो भक्तों की संगति में बारम्बार भगवान् की पावन कथाएँ सुनते हैं, उनके हृदय में अजन्मा भगवान् कानों के मार्ग से प्रवेश कर प्रत्येक मलिनता को धो देते हैं। ऐसे भक्त के हृदय में समस्त देवता और उनके समस्त गुण निवास करने लगते हैं। जैसे जल मछली का प्राण है, वैसे ही भगवान् श्रीहरि प्रत्येक देहधारी की आत्मा हैं; और इसलिए, तृष्णा, शोक, क्रोध और भय की जड़ रूपी घर को त्यागकर, प्रह्लाद हमें भगवान् नृसिंह के चरणों की शरण लेने को कहते हैं, जो एकमात्र सुरक्षित आश्रय हैं।



हरिवर्ष में, महान् भक्त प्रह्लाद और उनके लोग भगवान् नृसिंह के शान्त नर-सिंह रूप की आराधना करते हैं, निर्भय होने और उनके चरणों की शरण पाने की प्रार्थना करते हुए
(श्लोक 7-14)।

केतुमाल-वर्ष और भगवान् प्रद्युम्न को देवी लक्ष्मी की स्तुति

केतुमाल-वर्ष में भगवान् कामदेव — प्रद्युम्न — के रूप में निवास करते हैं, ताकि अपनी दिव्य पत्नी देवी लक्ष्मी को, तथा संवत्सर की उन कन्याओं और पुत्रों को — रात्रियों और दिनों के अधिष्ठातृ देवों को, जो छत्तीस हजार हैं — आनन्दित कर सकें। अपने कमल-मुख की छटा से, जिसके भ्रू एक चंचल, कोमल दृष्टि और मोहक मुस्कान के ऊपर हल्के-से उठे हैं, वे देवी रमा के हृदय को हर्षित करते हैं और अपनी इन्द्रियों को प्रसन्न करते हैं। पूरे हृदय से उनकी सेवा करती हुई, देवी अपनी प्रेम-स्तुति उठाती हैं।

ॐ हां हीं हूं ॐ नमो भगवते हृषीकेशाय सर्वगुणविशेषैर्विलक्षितात्मने आकूतीनां चित्तीनां चेतसां विशेषाणां चाधिपतये
षोडशकलायच्छन्दोमयायान्नमयायामृतमयाय सर्वमयाय सहसे ओजसे बलाय कान्ताय कामाय नमस्ते उभयत्र भूयात् ॥ १८ ॥

*om hrām hrīm hrūm om namo bhagavate hrṣīkeśāya sarva-guṇa-viśeṣair vilakṣitātmane
ākūtīnām cittīnām cetasām viśeṣāṇām cādhipataye ṣoḍaśa-kalāya cchando-mayāyānna-
mayāyāmṛta-mayāya sarva-mayāya sahase ojase balāya kāntāya kāmāya namas te ubhayatra
bhūyāt.*

अर्थ: ॐ, हां हीं हूं। भगवान् हृषीकेश को प्रणाम, इन्द्रियों के स्वामी, प्रत्येक विशेषता से विभूषित — समस्त कर्म-शक्तियों और ज्ञान-इन्द्रियों तथा अन्तःकरण के अधिपति, सूक्ष्म शरीर की सोलह कलाओं में प्रकट, जो वेद-स्वरूप हैं, जो अन्न रूप में देह का पोषण करते हैं, जो साक्षात् अमरत्व हैं और मन, इन्द्रिय तथा देह के समस्त बल के स्रोत हैं। आपको प्रणाम, हे मेरे प्रियतम भगवन्, साक्षात् प्रेम-स्वरूप, इस लोक में और परलोक में। (स्कन्ध 5, अध्याय 18, श्लोक 18)

देवी लक्ष्मी की प्रार्थना सच्ची शरण पर एक ध्यान है। इस संसार की स्त्रियाँ, वे गाती हैं, पति पाने के लिए व्रत लेती हैं, ऐसे पति की चाह में जो उनकी सन्तान, धन और प्राण की रक्षा करे; किन्तु ऐसे पति, स्वयं परतन्त्र होने के कारण, किसी की रक्षा नहीं कर सकते। सच्चा स्वामी वही है जिसे किसी ओर से कोई भय नहीं और जो भयभीत की चारों ओर से रक्षा कर सके — और केवल भगवान्, जिनका आनन्द पूर्णतया अपने ही आनन्दमय स्वरूप में स्थित है, इस नाम के योग्य हैं। जो केवल उनके चरणकमलों की सेवा चाहती है, वह अपनी समस्त अभिलाषाएँ पा लेती है; जबकि जो उन्हें किसी क्षणिक वरदान के लिए पूजती है, उसे वही वरदान मिलता है, और वह उसके नष्ट होने पर शोक करती है। यहाँ तक कि ब्रह्मा, भगवान् शिव, और देवों तथा दैत्यों के समूह भी देवी की कृपा पाने के लिए कठोर तप करते हैं, फिर भी असफल रहते हैं — क्योंकि उनका हृदय केवल भगवान् में स्थिर है। और इसलिए वे प्रार्थना करती हैं कि वे अपना वह आराध्य कमल-हस्त उनके सिर पर रखें, जिसे उन्होंने अपने भक्तों पर कितनी ही बार रखा है।



केतुमाल-वर्ष में, देवी लक्ष्मी भगवान् की सेवा करती हैं और उनके मनोहर कामदेव-प्रद्युम्न रूप की आराधना करती हैं, केवल उनके चरणकमलों की सेवा की प्रार्थना करते हुए (श्लोक 15-23)।

रम्यक-वर्ष और भगवान् मत्स्य को मनु की स्तुति

रम्यक-वर्ष में वर्तमान मनु — श्राद्धदेव, जो पूर्व युग में सत्यव्रत नाम से जाने जाते थे — उस दिव्य मत्स्य के रूप को सबसे बढ़कर पूजते हैं, जो उन्हें उस समय प्रकट हुआ था जब तीनों लोक प्रलय-जल में डूब गए थे। महान् भक्ति के अविराम प्रवाह से वे उस परम प्रिय रूप की आराधना करते हैं और अपनी स्तुति गाते हैं।

ॐ नमो भगवते मुख्यतमाय नमः सत्त्वाय प्राणायौजसे सहसे बलाय महामत्स्याय नम इति ॥ २५ ॥

om namo bhagavate mukhyatamāya namaḥ sattvāya prāṇāyaujase sahase balāya mahā-matsyāya nama iti.

अर्थ: ॐ, सर्वप्रमुख भगवान् को प्रणाम; उन्हें प्रणाम जो शुद्ध सत्त्व हैं, प्राण, ओज, तेज और बल हैं। महान् दिव्य मत्स्य को प्रणाम। (स्कन्ध 5, अध्याय 18, श्लोक 25)

यद्यपि भगवान् का सच्चा रूप ब्रह्मा और समस्त लोकपालों से छिपा रहता है, मनु गाते हैं, वे प्रत्येक प्राणी के भीतर प्राणवायु के रूप में और बाहर वायुमण्डल के रूप में विचरते हैं, वेदों के द्वारा प्रबल नाद करते हुए और इस प्रकार अपनी उपस्थिति की घोषणा करते हुए; और वे समूचे ब्रह्माण्ड को अपनी पवित्र आज्ञाओं से वैसे ही नियन्त्रित करते हैं जैसे कोई सूत्रधार कठपुतली को। जब लोकपाल, ईर्ष्या से क्लान्त होकर, पृथक्-पृथक् और मिलकर भी प्रयास कर रहे थे, तब वे जीवन-दायक भगवान् के बिना एक भी प्राणी की — चर या अचर, द्विपद या चतुष्पद — रक्षा नहीं कर सके। और इस पृथ्वी को, उसकी ओषधियों और लताओं सहित, तथा स्वयं सत्यव्रत को उसकी सतह पर धारण कर, अजन्मा भगवान् प्रलय के उमड़ते सागर में महान् वेग से विचरते रहे। उस भगवान् को, समस्त प्राणियों के अन्तर्यामी को, मनु प्रणाम करते हैं।



रम्यक-वर्ष में, मनु श्राद्धदेव उस महान् स्वर्णिम दिव्य मत्स्य की आराधना करते हैं, जिसने पृथ्वी को और स्वयं उन्हें प्रलय-जलों से सुरक्षित पार किया (श्लोक 24-28)।

हिरण्मय-वर्ष और भगवान् कूर्म को अर्यमा की स्तुति

हिरण्मय-वर्ष में भगवान् दिव्य कूर्म के रूप में निवास करते हैं। वहाँ अर्यमा, पितरों के समूहों के स्वामी, उस प्रदेश के समस्त निवासियों सहित, इस परम प्रिय रूप की आराधना करते हैं और अपनी प्रार्थना अर्पित करते हैं।

ॐ नमो भगवते अकूपाय सर्वसत्त्वगुणविशेषणायानुपलक्षितस्थानाय नमो वर्षणे नमो भूम्ने नमो नमोऽवस्थानाय नमस्ते ॥ ३० ॥

om namo bhagavate akūpārāya sarva-sattva-guṇa-viśeṣaṇāyānu-palakṣita-sthānāya namo varṣmaṇe namo bhūmne namo namo 'vasthānāya namas te.

अर्थ: ॐ, दिव्य कूर्म के रूप में भगवान् को प्रणाम, जिनका स्वरूप पूर्णतया शुद्ध सत्त्वमय है, जिनका स्थान अगोचर है। सबसे प्राचीन को प्रणाम, सर्वव्यापी भगवान् को प्रणाम, सबके आधार को बारम्बार प्रणाम। (स्कन्ध 5, अध्याय 18, श्लोक 30)

यह समूचा दृश्य जगत्, अर्यमा गाते हैं, भगवान् की अपनी सृजन-शक्ति से फैला हुआ और अनगिनत रूपों में देखा गया, जिसका सच्चा विस्तार कोई माप नहीं सकता, उनकी अपनी अभिव्यक्ति के अतिरिक्त कुछ नहीं; फिर भी उनका सच्चा स्वरूप शब्दों में कभी नहीं बँध सकता — और उस भगवान् को वे प्रणाम करते हैं। वे ही हैं जो प्रत्येक नाम से पुकारे जाते हैं: पशु और स्वेदज प्राणी, पक्षी और वनस्पति, चर और अचर, देव और ऋषि और पितर, इन्द्रिय, स्वर्ग और अन्तरिक्ष के लोक, पृथ्वी और पर्वत, नदी और सागर, द्वीप और ग्रह और तारा। यद्यपि उनके नाम और रूप असंख्य हैं, द्रष्टा उनमें एक निश्चित संख्या में तत्त्वों की कल्पना करते हैं; और वह ज्ञान भी, जिससे यह अनेकता निरस्त होती है, स्वयं भगवान् के अतिरिक्त कुछ नहीं, जो सत्य ज्ञान के मूर्तरूप हैं।



हिरण्मय-वर्ष में, पितरों के स्वामी अर्यमा और उनके लोग भगवान् की दिव्य कूर्म रूप में आराधना करते हैं, जो सबसे प्राचीन, सबके आधार हैं (श्लोक 29-33)।

उत्तर कुरुओं की भूमि और भगवान् वराह को धरती माता की स्तुति

उत्तर कुरुओं की भूमि में यज्ञों के अधिष्ठाता भगवान् दिव्य वराह के रूप में पूजे जाते हैं। वहाँ स्वयं धरती माता — वही भूमि जो हमें धारण करती है — कुरुओं सहित, अटूट भक्ति के अविराम प्रवाह से उनकी आराधना करती हैं और एक परम गोपनीय प्रार्थना अर्पित करती हैं। वे वराह को वन्दन करती हैं, जो ॐ से सूचित हैं और केवल पावन मन्त्रों से ही सच्चे रूप में जाने जाते हैं, प्रत्येक यज्ञ के देव, जिनका दिव्य शरीर स्वयं महान् यज्ञों से बना है। जैसे कर्मकाण्ड में निपुण जन यज्ञ-काष्ठ से छिपी अग्नि को मन्थन कर निकालते हैं, वैसे ही बुद्धिमान्, उनकी वास्तविकता को देखने के अभिलाषी, विवेकपूर्ण मन के प्रकाश से उन्हें अपने अनुशासित शरीर और इन्द्रियों के भीतर खोजते हैं। जो बुद्धि मनन और योग के अंगों से तीक्ष्ण हो गई है, उसके लिए वे साक्षात् अनुभव में आते हैं, वे परमात्मा जो माया के गुणों से परे हैं। और जैसे लोहे का टुकड़ा चुम्बक की ओर मुड़कर चलता है, वैसे ही उनकी माया तीनों गुणों के द्वारा ब्रह्माण्ड की सृष्टि, पालन और संहार चलाती रहती है, जबकि वे केवल उस सबके साक्षी बने रहते हैं। तब धरती माता उस महान् कर्म को स्मरण करती हैं, जिसके लिए वे उन्हें सबसे अधिक प्रेम करती हैं।

प्रमथ्य दैत्यं प्रतिवारणं मृधे
यो मां रसाया जगदादिसूकरः ।
कृत्वाग्रदंष्ट्रे निरगादुदन्वतः
क्रीडन्निवेभः प्रणतास्मि तं विभुमिति ॥ ३९ ॥

*pramathya daityaṁ prativāraṇaṁ mṛdhe yo mām rasāyā jagad-ādi-sūkaraḥ kṛtvāgra-daṁṣṭre
niragād udanvataḥ kṛīḍann ivebhaḥ praṇatāsmi taṁ vibhum iti*

अर्थ: युद्ध में उस दैत्य को मारकर, जो प्रतिद्वन्द्वी गजराज के समान उनके सम्मुख खड़ा था, आदि सूकर, ब्रह्माण्ड के मूल कारण, ने मुझे अपनी दाढ़ की नोक पर रखा और प्रलय-जलों की समूची गहराई से ऊपर उठे, जैसे कोई गज क्रीड़ा करता है। उस सर्वशक्तिमान् भगवान् को मैं प्रणाम करती हूँ। (स्कन्ध 5, अध्याय 18, श्लोक 39)



उत्तर कुरुओं की भूमि में, धरती माता और कुरु दिव्य वराह की आराधना करते हैं, जिन्होंने उन्हें प्रलय-जलों से कोमलता से अपनी दाढ़ पर उठा लिया — वे प्रेमपूर्ण कृतज्ञता से उन्हें प्रणाम करती हैं (श्लोक 34-39)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

एक ही भगवान् अनेक प्रिय रूपों में पूजे जाते हैं। समूची पृथ्वी में वही परम भगवान् निवास करते और पूजे जाते हैं — हयग्रीव और नृसिंह रूप में, प्रद्युम्न और मत्स्य रूप में, कूर्म और वराह रूप में। उनके रूप असंख्य हैं, फिर भी वे सदा एक ही हैं, और प्रत्येक स्तुति उसी एक परम पुरुष तक पहुँचती है।

भगवान् रक्षा और उद्धार के लिए अवतरित होते हैं। प्रत्येक स्तुति एक उद्धारक कर्म का स्मरण करती है — वेदों का उद्धार, निर्भय शरण का दान, पृथ्वी और उसके लोगों का प्रलय से सुरक्षित पार। भगवान् के रूप दूरस्थ चमत्कार नहीं, अपितु अपने भक्तों के लिए कोमल उद्धार के कर्म हैं।

भक्त की महानता स्वार्थ-त्याग से मापी जाती है। जब प्रह्लाद, अपने ही पिता से इतना कष्ट सहने के बाद भी, यह प्रार्थना करते हैं कि दुष्ट भी शान्ति पाएँ और प्रत्येक मन बिना किसी निजी स्वार्थ के भगवान् की ओर मुड़ जाए (श्लोक 9), और जब बाद में देवी लक्ष्मी स्वीकार करती हैं कि ब्रह्मा और शिव का तप भी उनकी कृपा नहीं पा सकता, जबकि केवल सेवा चाहने वाली आत्मा को सब कुछ मिल जाता है (श्लोक 21-22), तब भागवत अपने दो सबसे महान् उपासकों के माध्यम से एक ही शिक्षा देता है: भगवान् भक्ति को शक्ति या प्राप्त ऐश्वर्य से नहीं, अपितु हृदय की उस पूर्णता से मापते हैं जिसमें अपने लिए कुछ भी चाहने की इच्छा शेष नहीं रहती। यही कारण है कि ये दोनों प्रार्थनाएँ अन्य सबसे बढ़कर स्मरण की जाती हैं।

निर्भयता केवल उन्हीं में मिलती है। प्रह्लाद निर्भय होने की प्रार्थना करते हैं, और लक्ष्मी गाती हैं कि केवल वे ही, जिन्हें कोई भय नहीं, भयभीत की चारों ओर से रक्षा कर सकते हैं। भगवान् की शरण लेना समस्त भय की पहुँच से बाहर निकल जाना है।

सच्चा आश्रय उनके चरण हैं, संसार नहीं। बारम्बार ये स्तुतियाँ हमें घर, धन और क्षणिक वरदानों से मोड़कर भगवान् के चरणकमलों और उनके भक्तों की संगति की ओर ले जाती हैं — वही एकमात्र आश्रय जो कभी नहीं मिटता।

वे शब्दों से परे भी हैं और सबसे निकट भी। कूर्म-स्तुति और वराह-स्तुति स्वीकार करती हैं कि उनका सच्चा स्वरूप वर्णन नहीं किया जा सकता, फिर भी वे प्रत्येक प्राणी के भीतर आत्मा हैं और प्रत्येक कर्म के साक्षी — पूर्णतया परे, और पूर्णतया समीप।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय द्वारा दिए गए समूची पृथ्वी के प्रार्थना में लीन चित्र में कुछ गहराई से हृदयस्पर्शी है। हमें प्रदेश-दर-प्रदेश दिखाया जाता है, और प्रत्येक में भगवान् दूर नहीं रहे, अपितु अपने लोगों के बीच उसी रूप में रहने आए हैं जिसे उनका हृदय प्रेम कर सके — ज्ञान के अश्व-मुख उद्धारक, निर्भय नर-सिंह, मनोहर प्रद्युम्न, महान् मत्स्य, धैर्यवान् कूर्म, बलशाली वराह। और प्रत्येक प्रदेश में उत्तर एक ही है: एक भक्त हाथ जोड़ता है और प्रेम उँडेल देता है, और लोग अपने स्वर मिला देते हैं। यह हमें सिखाता है कि भक्ति एक स्थान की एक आत्मा का निजी कोष नहीं, अपितु समस्त सृष्टि की सहज भाषा है। स्वयं धरती माता एक भक्त हैं; पितरों के स्वामी एक भक्त हैं; भगवान् के पार्श्व में विराजमान देवी लक्ष्मी भी उनकी स्तुति गाती हैं। जब हम अपनी प्रार्थना में स्वयं को छोटा या अकेला अनुभव करें, यह अध्याय हमें स्मरण कराता है कि हम एक ऐसी स्तुति में सम्मिलित हो रहे हैं जो संसार के हर कोने से पहले ही उठ रही है। हाथ जोड़कर उनका नाम लेना उस विशाल और प्राचीन स्वर-समूह में अपना स्थान लेना है, और उन महान् आत्माओं की भाँति यह पाना है कि भगवान् पहले से ही समीप हैं — उस रूप में प्रतीक्षारत जिसे हमारा अपना हृदय सबसे अधिक प्रेम करता है, हमें निर्भय बनाने और हमें कोमलता से जलों से उठाने के लिए।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, इस अध्याय में स्मरण किए गए भगवान् के रूपों में से किसी एक को चुनें — शायद नृसिंह को, जो हृदय को निर्भय बनाते हैं, या वराह को, जो गिरे हुए को गहराई से उठाते हैं — और उसे शान्ति से अपने मन के सम्मुख धारण करें। इन महान् भक्तों की भाँति यह सरल प्रार्थना अर्पित करें: “हे भगवन्, मेरे भय और मेरी तृष्णा को भस्म कर दें; मेरे हृदय में प्रकट हों और मुझे निर्भय बनाएँ; मेरा एकमात्र आश्रय आपके चरण हों।” फिर, दिनभर, जब भी कोई चिन्ता उठे, कोमलता से उस रूप की ओर लौटें और भीतर-ही-भीतर दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” इस प्रकार आप वर्षों की स्तुति में सम्मिलित होते हैं, और उसी भगवान् को, जिन्होंने वेदों को बचाया और पृथ्वी को धारण किया, अपने छोटे-छोटे भार भी उठाने देते हैं।

उपसंहार

पंचम स्कन्ध का अठारहवाँ अध्याय हमारी दृष्टि को समूचे भू-मण्डल से उठती हुई आराधना की ओर ले जाता है। भद्राश्व में, भद्रश्रवा और उनके लोग भगवान् हयग्रीव की आराधना करते हैं, जिन्होंने हरे गए वेद ब्रह्मा को लौटाए। हरिवर्ष में, महान् भक्त प्रह्लाद भगवान् नृसिंह की स्तुति करते हैं और निर्भय होने तथा उनके चरणों में विश्राम पाने की प्रार्थना करते हैं। केतुमाल में, देवी लक्ष्मी भगवान् को प्रद्युम्न रूप में गाती हैं, प्रत्येक वरदान से बढ़कर उनके चरणों की सेवा चाहती हुई। रम्यक में, मनु उस दिव्य मत्स्य की आराधना करते हैं जिसने पृथ्वी को प्रलय से पार किया; हिरण्मय में, अर्यमा उस प्राचीन कूर्म को प्रणाम करते हैं, जो समस्त नामों से परे फिर भी सबकी आत्मा हैं; और उत्तर कुरुओं की भूमि में, स्वयं धरती माता उस दिव्य वराह की आराधना करती हैं जिसने उन्हें प्रलय से अपनी दाढ़ पर उठाया। छह प्रदेश, छह रूप, छह स्तुतियाँ — और एक भगवान्, जो सर्वत्र एकमात्र आश्रय, एकमात्र निर्भयता, एकमात्र सत्य के रूप में पूजे जाते हैं। यह वह अध्याय है जो समूची पृथ्वी को एक मन्दिर और प्रत्येक श्रद्धालु हृदय को उसमें एक गायक बना देता है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण, पंचम स्कन्ध, अध्याय 18, “A description of (the various Varsas) of the terrestrial globe continued!”
- शृंखला: Srimad Bhagavatam Wisdom · Biswa Sanatan Dharma Seva Trust।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन और अनुशंसा के अनुसरण में प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी और लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका की प्रतिलिपि नहीं है। किसी प्रकाशक के साथ किसी सम्बन्ध या उसके समर्थन का संकेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-5-chapter-18-prayers-to-the-lords-divine-forms-in-the-varshas-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट